ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 148-153
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-I, Issues-X YEAR- June -2018

शिक्षा ग्रन्थों में वर्णोच्चारण हेतु मात्रा विश्लेषण

डॉ0 विनीता सिंह
एसो0 प्रो0– संस्कृत विभाग, कन्या महाविद्यालय आर्य समाज भूड़, बरेली (उ0प्र0) भारत

विभिन्न ध्वनियों के उच्चारण में लगने वाले समय के आधार पर ध्वनियों की 'मात्रा' का निर्धारण किया गया है। प्र.ति की नानारूपता से प्रत्येक व्यक्ति की उच्चारणवृत्ति भिन्न होती है। अतः उच्चारण काल को किसी यन्त्र विशेश की समय सीमा से नहीं बांधा जा सकता किन्तु प्राचीन ध्वनिविदों ने पक्षी या पशु की ध्वनि विशेश का उदाहरण देकर मात्रा, द्विमात्रा, त्रिमात्रा या अर्धमात्रा के उच्चारण काल का आदर्श प्रस्तुत किया है। षिक्षा में उच्चारण की वृत्तियों का बहुविधा विश्लेशण किया गया है। वर्णो के उच्चारणकाल पर विचार किया गया है। किस वर्ण का उच्चारण कितने काल में किया जाना उचित है। इस विशय में षिक्षा ग्रन्थों में सूक्ष्म चिंतन प्राप्त होता है।

शिक्षा ग्रन्थों में मात्रा विचार– शिक्षा ग्रन्थों में उपलब्ध मात्रा सम्बन्धी विचार द्रश्टव्य हैं। वर्ण का मूलाधार से उद्गमन प्रारम्भ होने से लेकर मुख से बहिर्गमन पर्यन्त का काल 'मात्रा' कहलाता है। वर्ण का उद्गम मूलाधार से होता है तत्पश्चात् कमशः ह्रदय, कण्ठ और जिह्वाग्र तक आता हुआ मुख से बहिर्गमन करता है। विभिन्न शिक्षा ग्रन्थों में मात्रा विषयक चिन्तन दृष्टव्य हैं–

याज्ञवल्क्य शिक्षा– याज्ञवल्क्य शिक्षा में कहा है–

"मानसे चाणवं विद्यात् कण्ठे विद्यात् द्विराणवम्। त्रिराणवं तु जिह्वाग्रे निःसृतं मात्रिकं विदुः। (1)।।"

वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा– वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा में कहा गया है– "व्यंजनं चार्धमात्रिकम्। तदर्धमणु तस्यार्ध परमाण्वभिधीयते। (2)।" अर्थात् मात्रा का चतुर्थांश अणु काल है तथा अणु काल का अर्ध भाग (मात्रा का अश्टमांश) परमाणु काल है।

शम्भु शिक्षा– शम्भु शिक्षा में भी मात्रा का चतुर्थांश अणु कहा गया है– "चतुर्भिरणुभिर्मात्रा परिमाणमिति स्मृतम्। (3)।"

माण्डूक्य शिक्षा– माण्डूक्य शिक्षा में भी ऐसा ही कहा गया है–

"अक्ष्णोनिर्मेश मात्रेण यो वर्णः समुदीर्यते। स एक मात्रो द्विस्तावान् दीर्घस्त्रिः प्लुत उच्यते। (4)।।"

वर्णो के ह्रस्वदीर्घादि स्वरूप का ज्ञान वर्णोच्चारण काल के आधार पर ही किया जा सकता है। सामान्यतः वर्णो के दो भेद हैं– स्वर तथा व्यंजन। स्वर के तीन भेद हैं– ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत। एक मात्रा कालिक स्वर ह्रस्व संज्ञक, द्विमात्रा कालिक स्वर दीर्घसंज्ञक तथा त्रिमात्रा कालिक स्वर प्लुत संज्ञक होते हैं। व्यंजन अर्धमात्रा कालिक होते हैं।

काल निर्णय शिक्षा– इस शिक्षा में वर्णो के उच्चारण काल को त्रिविध विभाजित किया गया है–

"अखण्डवर्णविशयो वर्णाशविशयो पि च। विरामविशयश्चेति त्रिविधः काल उच्यते। (5)।।"

अर्थात् अखण्डवर्ण का उच्चारण काल, वर्णाश का उच्चारण काल और वर्णद्वय के मध्य में विराम काल पर विचार किया गया है। इनका संक्षेपतः विवेचन प्रस्तुत है।

अ–अखण्डवर्ण का उच्चारण काल

पाणिनीय शिक्षा– पाणिनीय शिक्षा में ह्रस्व दीर्घादि के ग्रहण में उच्चारण काल पर विचार किया गया है। "ह्रस्वोदीर्घप्लुत इति कालतो नियमा अचि। (6)।" किन्तु यहां ह्रस्वादि के उच्चारण का काल नहीं बताया गया है। यद्यपि पाणिनीय व्याकरण में ह्रस्व का एकमात्रिक, दीर्घ का द्विमात्रिक और प्लुत का त्रिमात्रिक होना स्पश्ट कहा गया है। पाणिनीय शिक्षा का भी यही अभीश्ट है। पिश्टपेशण न करके पाणिनीय शिक्षा में मात्रादि के अनुसार उच्चारण काल का निर्धारण इस प्रकार किया गया है–

"चाशस्तु वदते मात्रं द्विमात्रंत्वेव वायसः। शिखी रौति त्रिमात्रं तु नकुलस्त्वर्धमात्रकम्। (7)।।"

चाश, वायस तथा शिखी के उच्चारण काल की तुलना करके क्रमशः ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत मात्राओं का निर्देश किया है तथा नकुल के अर्धमात्रिक उच्चारण काल की तुलना करके व्यंजन का उच्चारण काल निर्दिश्ट किया है। अनुस्वार के काल पर पाणिनीय शिक्षा में स्पश्ट निर्देश नहीं दिया गया है। यद्यपि पाणिनीय शास्त्र के अनुसार अनुस्वार को स्वर और व्यंजन दोनों के अंतर्गत स्वीकार किया गया है। रंग वर्ण को पाणिनि शिक्षा में द्विमात्रिक माना गया है–

"ह्रदये चौकमात्रस्त्वर्धमात्रस्तु मूर्धनि। नासिकायां तथार्थ च रंगस्यैव द्विमात्रता। (8)।।"

याज्ञवल्क्य शिक्षा– याज्ञवल्क्य शिक्षा में स्पश्टरूपेण ह्रस्व की एकमात्रिक, दीर्घ की द्विमात्रिक, प्लुत की त्रिमात्रिक

अनुरूपी लेखक

व्यंजन की अर्धमात्रिक उच्चारण कालता कही गयी है। "एकमात्रो भवेद् ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते। त्रिमावस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यंजनश्चार्धमात्रिकम्। (9)।।" इस शिक्षा में अनुस्वार के विशय में विस्तृत रूप से कहा गया है। जहां अनुस्वार ह्रस्व स्वर से परे हो वहां वह द्विमात्रिक होता है। दीर्घस्वर के बाद एक मात्रिक तथा संयोगाक्षर के बाद भी एकमात्रिक अनुस्वार होता है।

"वर्णे तु मात्रिके पूर्व ह्यनुस्वारो द्विमात्रिकः। द्विमात्रिके मात्रिकः स्यात्संयोगाद्यश्चयो भवेत्। (10)।।"

दीर्घ अथवा ह्रस्व वर्ण के बाद अनुस्वार हो और उसके बाद संयुक्त वर्ण हों तो अनुस्वार एकमात्रिक ही होता है–

"अनुस्वारस्योपरिश्टात्संयोगो यत्र .श्यते। ह्रस्वं तं तु विजानीयात् स स्थानामितिदर्शनम्। (11)।।"

पूर्व पाद में ह्रस्व या दीर्घ के बाद अनुस्वार हो और अनुस्वार से परे ऋकारयुक्त व्यंजन हो तो अनुस्वार द्विमात्रिक होता है– "अनुस्वारो द्विमात्रः स्या.वर्णव्यंजनादिगः। ह्रस्वाद् वा यदि वा दीर्घाद् देवानां ह्रदये यथा। (12)।।"

यहां पर ऋकारयुक्त व्यंजन परे रहने पर अनुस्वार का जो दीर्घ (द्विमात्रिक) विधान किया गया है वह व्यवस्थित विकल्प के रूप में है। पूर्वोक्त कारिका के पश्चात् पुनः स्पश्ट किया गया है–

"अनुस्वारस्तु यो दीर्घादक्षराद्यो भवेत्परः। स तु ह्रस्व इति ज्ञेयो मन्त्रेश्वेव विभाशया। (13)।।"

इस प्रकार याज्ञवल्क्य शिक्षा के अनुसार अनुस्वार कहीं एकमात्रिक और कहीं द्विमात्रिक हैं। याज्ञवल्क्य शिक्षा में रंगवर्ण की भी एकमात्रिकता तथा द्विमात्रिकता कही गई है। यहां रंगवर्ण के विशय में भी विस्तार किया गया है–

"रंगे चौव समुत्पन्ले नो ग्रसेत्पूर्वमक्षरम्। स्वरं दीर्घ प्रयुंजीत पश्चान्नासिक्यमुच्चरेत्। (14)।।"

अर्थात् रंग के उच्चारण पूर्व अक्षर को ग्रसित न करे, पूर्व अक्षर को दीर्घ उच्चारित करे, उसके पश्चात् रंग (नासिक्य) उच्चारित करे। दो स्वरों के बीच में आकार का द्विमात्रिक उच्चारण करने के बाद अनुस्वार (अर्द्ध) का उच्चारण किया जाए जैसे– "लोकाँ अकल्पयन्।" दो स्वरों के बीच रेफ व्यवहित भी द्विमात्रिक रंग होता है। जैसे– "शत्रूँइति" स्वर व्यंजन के मध य में ऊश्मा व्यवहित एकमात्रिक रंग होता है। जैसे–

"शामैर यँश्चन्द्रमसि।" "द्विमात्रो मात्रिको वापि नासामूलं समाश्रितः। अन्ते प्रयुज्यते रंगः पंचमैः सर्वनासिकः। (15)।।" मकार के बाद अन्तःस्थ अथवा ऊश्मा संज्ञक वर्ण परे हों वहां मकार का 'रंग' पूर्व अनुनासिक और एकमात्रिक रहता है। "अनन्तरं मकारस्य यो रंगस्तत्र रज्यते। सर्वानुनासिक विद्यादेशा मन्योपधानिका। (16)।।"

रंग नासिका के मूल भाग से उच्चारित होता है, कांसे के बर्तन से निकली ध्वनि के समान मृदु और द्विमात्रिक होता है। नादहीन होता है जैसे–

"वृश्टिमाँ।। इव।।" "नस्त उत्पद्यते रंगः कांस्येन समनस्विनः। मृदुश्चैव द्विमात्रः स्याद् वृश्टिमाँ।। इव दर्शनम्। (17)।।"

वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा– वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा में ह्रस्व दीर्घ प्लुतादि मात्राएं क्रमशः एकमात्रिक, द्विमात्रिक और त्रिमात्रिक काल की ही कही गई हैं। व्यंजन की अर्ध मात्रा कही गई है।

"एकमात्रो भवेद् ह्रस्वो द्विमात्रो दीर्घ उच्यते। त्रिमात्रस्तु प्लुतो ज्ञेयो व्यंजनंचार्धमात्रिकम्। (18)।।"

संयोगपूर्व, व्यंजनान्त तथा अन्त्य ह्रस्व स्वर यद्यपि द्विकालिक कहे गए हैं किन्तु इनकी दीर्घ संज्ञा नहीं कही गई है–

"स्वराः संयोगपूर्वा ये व्यंजनान्तास्तथान्तगाः। एशां कालो द्विमात्रः स्यान्नतु दीर्घा हि ते स्मृताः। (19)।।"

रंग के विशय में यहां कुछ भी नहीं कहा गया है।

मल्लशर्मकृताशिक्षा– मल्लशर्म.ताशिक्षा में भी ह्रस्व से लेकर व्यंजनपर्यन्त वर्णो की पूर्वोक्त व्यवस्था की गई है। "ह्रस्वात्तु द्विगुणो दीर्घो दीर्घादेकगुणः प्लुतः। (20)।" इस शिक्षा में रंग के संबंध में विशिश्ट चर्चा की गई है– 'अथरंगमहारंगातिरंगा'– "सुसन्धेश्चावसानस्य सार्द्धव्यकेन बिन्दुना। भंग स्यादत्र मन्त्रेण वै रंगस्तु भवेदिति।।" महाशब्दोऽतिशब्दश्च यद्वर्णात्प्राक् प्रवर्तते। महारंगोतिरंगश्च संज्ञा तस्यैव निश्चिता। (21)।।" इन रंग वर्णो में रंग को चतुर्मात्रिक, महारंग को पंचमात्रिक तथा अतिरंग को शश्मात्रिक उच्चरित कहा गया है– "प्लुतादेकगुणो रंगो रंगादेकगुणाधिकः।।

महाशब्देन संयुक्तो व्यंजनचार्द्धमात्रिकम्। अतिरंगो महारंगाद् वृद्धो ह्येकगुणाधिकः। (22)।।"

लोमशीशिक्षा– लोमशीशिक्षा में भी ह्रस्वादि के सम्बन्ध में पूर्वोक्त नियम ही स्वीकार किया गया है। रंग वर्ण की एकमात्रिकता और द्विमात्रिकता स्वीकार की गई है।

"तस्यमात्रा तु ह्रदये अणुमात्रा तु मूर्द्धनि। नासाग्रे त्वपूर्णा मात्रा रंगस्य परिकीर्तिता।।

रंगे चैव समुत्पन्ने न ग्रसेत् पूर्वमक्षरम्। स्वरे दीर्घ प्रयुजीत तस्य नासिक्यमुच्चरेत्।।

द्विमात्रो मात्रिको वापि नासामूलं समाश्रितः। अन्ते प्रयुज्यते रंगः पंचमैः सर्वनासिकः। (23)।।"

माण्डूकी शिक्षा– माण्डूकी शिक्षा में ह्स्वादि स्वरों की पूर्वोक्त शिक्षाओं के अनुसार ही व्यवस्था है, किन्तु व्यंजन की मात्रा का निर्देश नहीं दिया गया है–

"अक्ष्णोर्निमेश मात्रेण यो वर्णः समुदीर्यते। स एकमात्रो द्विस्तावान् दीर्घस्त्रिः प्लुत उच्यते। (24)।।"

'रंग' की द्विमात्रिकता ही स्वीकार की गई है। अनुस्वार हस्व, दीर्घ एवं प्लुत भी स्वीकार किया गया है।

"नासादुत्पद्यते रंगः कास्येन सम निस्वनः। मृदुश्चैव द्विमात्रं स्याद् वृश्टिमाँ इति दर्शनम्।। अनुस्वाराश्च कर्त्तव्या ह्रस्वदीर्घप्लुतास्त्रयः। (25)।"

नारदीय शिक्षा– नारदीय शिक्षा में मात्रा का परिमाण इस प्रकार स्वीकार किया गया है– "निमेशकाला मात्रा स्याद् विद्युत्कालेति चापरे। (26)।।" किन्तु ह्रस्वादि स्वरों का काल निर्देश नहीं किया गया है। रंग वर्ण को द्विमात्रिक स्वीकार किया गया है। "ह्रदया दुत्तिश्ठते रंगः कांस्येन सम निःस्वनः।

मृदुश्चैव द्विमात्रश्च दधन्वां इति दर्शनम्। (27)।।"

शैशिरीय शिक्षा– शैशिरीय शिक्षा में ह्रस्वादि संज्ञा उच्चारण काल के आधार पर निश्चित कही गई है किन्तु उनका काल परिमाण निश्चित नहीं किया गया है। व्यंजन को अर्धमात्रिक स्वीकार किया गया है। संयुक्त व्यंजन को पादमात्रा कालिक कहा गया है। मात्रा का चतुर्थांश पादकालिक माना है। ह्रस्व से परे अनुस्वार को त्रिपादमात्रिक तथा दीर्घ से परे अनुस्वार को पादमात्रिक माना गया है (28)।

कौहलीय शिक्षा– कौहलीय शिक्षा में उच्चारण कालक्रम में एक, द्वि तथा त्रय मात्राएं तो स्वीकार की गई हैं किन्तु ह्रस्वादि के काल का उल्लेख नहीं किया गया है।

"एकद्वित्रिक्रमेणैव मात्रा कालं मनीशिणः। शब्दैनिदर्शयन्त्यत्र चाशकाककलापिनाम्। (29)।।"

व्यंजन को अणुमात्रिक कहा गया है–

"वेदस्थप्रणवे तु स्यात् समकारो द्विमात्रकः। स्वरमात्रं द्विमात्रं वा व्यंजन त्वणुमात्रकम्। (30)।।"

पारि शिक्षा– पारि शिक्षा में पूर्वोक्त शिक्षा निर्देशों के अनुसार चाशादि के उच्चारण काल के समान ह्रस्वादि का उच्चारण काल कहा गया है। रंग वर्ण को द्विमात्रिक कहा गया है। "रंगे मुखे व्याघ्ररू तोपमं स्यात् मात्रा द्वयं ह्रज्जनितस्त्वनास्यम्। (31)।।"

शम्भु शिक्षा– शम्भु शिक्षा में ह्रस्वादि का पूर्वोक्त काल निर्धारण ही है। रंग प्लुत वर्ण को चतुर्मात्रा कालिक कहा है। शुद्ध प्लुत को त्रिमात्रिक कहा है। इस प्रकार प्लुत के दो भेद हैं– रंगप्लुत और शुद्धप्लुत।

"रंगप्लुतश्चतुर्मात्रः शुद्धः प्लुतस्त्रिमात्रिकः। दीर्घ उच्चद्विमात्रः स्याद् ह्रस्वस्याप्येक मात्रिकः। (32)।।"

आरण्य शिक्षा– आरण्य शिक्षा में रंग वर्ण पर इस प्रकार विचार किया गया है–

"पंचरंगप्लुता दीर्घाश्चत्वारस्तैत्तिरीयके। तेशामन्ते च नासिक्यं रंगसंज्ञामितीर्य ते।।

रंगे स्वरे च मात्रैका प्रत्येक रंगदीर्घयोः। रंगे स्वरे च द्वेमात्रे तथावत्प्लुतरंगयोः।।

रंग प्लुतश्चतुर्मात्र इत्युक्तो याजुशां मते। (33)।"

व्यास शिक्षा– व्यास शिक्षा में ह्रस्वादि विचार पूर्वोक्त शिक्षा ग्रन्थों के आधार पर वर्णित हैं। एक मात्रा का काल परिमाण अंगुलिस्फोटन काल के बराबर है। "अंगुलिस्फोटन यावान् तावान् कालस्तु मात्रिकः। (34)।" चाश, वायस, मयूर की ध्वनि का उच्चारणकाल क्रमशः मात्रिक, द्विमात्रिक तथा त्रिमात्रिक है–

"चाशोक्त एकमात्रस्याद्वायसेन द्विमात्रिकः। मयूरेण त्रिमात्रश्च जानीयात्काललक्षणम्। (35)।।"

ह्रस्वादि स्वरों को मात्रानुसार स्पश्ट किया गया है–

"ह्रस्वस्यादेकमात्रस्य द्विमात्रस्य तु दीर्घता। त्रिमात्रस्य प्लुतो चां हि पादो मात्राचतुर्थकः। (36)।।"

व्यंजन की मात्रा का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि व्यंजन परे रहने पर पूर्व व्यंजन अणुमात्रिक है।

"हल्युक्तं हलुत्तरं तदणुमात्रं प्रकीर्तितम्। (37)।"

"हलो भक्तिर्विसर्गो न्तो हस्वान्नो यवहोत्तरः। स्पर्शोद्ध्वो वोऽर्धमात्रास्तेऽवसाने लस्त्रिपादता। (38)।।"

अर्थात् व्यंजन, स्वर भक्ति, विसर्ग, हस्व से परे पदान्त– यवह परक नकार– (ते देवा अब्रुवन्, यो नः, ओमन्वती, उशन् ह वै) तथा स्पर्शपरक वकार (एवास्मिन रेतः, विभूदाग्ने) ये वर्ण अर्धमात्रा कालिक होते हैं। अवसान में ल् की त्रिपाद मात्रा होती है। (बाल्।)। शिक्षा ग्रन्थों में ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत अखण्ड वर्णो को एकमात्रिक, द्विमात्रिक तथा त्रिमात्रिक ही स्वीकार किया गया है। कुछ शिक्षाकारों ने अति प्रसिद्धि के कारण उनका शब्दशः उल्लेख करना आवश्यक नहीं समझा। अनुस्वार की उच्चारण कालिकता पर प्रायः याज्ञवल्क्य शिक्षा का समर्थन किया गया है। रंग वर्ण के उच्चारण में प्रायः अन्तर परिलक्षित है। यह अन्तर शाखानुसार है। अतः परस्पर विरोधिता नहीं है।

आ–वर्णांश (सन्ध्यक्षर) काल– अखण्ड वर्णो के उच्चारण काल के पश्चात् सन्ध्यक्षरों के उच्चारण काल के सम्बन्ध में उनके घटकों के आधार पर काल (मात्रा) का विचार किया गया है। ए, ऐ, ओ, औ, ऋ तथा ल् में एकाधिक घटक

हैं। ए तथा ऐ में अकार तथा इकार, ओ तथा औ में अकार तथा उकार, ऋ तथा ऌ में क्रमशः रेफ तथा लकार और अच् घटक हैं।

पाणिनीय शिक्षा– पाणिनीय शिक्षा के अनुसार– 'ए' तथा 'ऐ' की अर्धमात्रा कण्ठस्थानीय अर्थात् 'अकार' है। शेश अध्यर्धमात्रा इकार की होती है। 'ओ' तथा 'औ' की एक मात्रा कण्ट स्थानीय अर्थात् 'अकार' है, एक मात्रा ओश्ठ्य अर्थात् उकार है। ऐसा शिक्षा के मूल पाठों द्वारा स्पश्ट है–

"अर्ध मात्रा तु कण्ठयस्य ह्रौकारैकारयोर्भवेत्। ओकारौकारयोर्मात्रा"। (39)।

पाणिनीय शिक्षा प्रकाश– पाणिनीय शिक्षा प्रकाश में इस प्रकार कहा गया है– "अर्ध मात्रा तु कण्ठयास्यादेकारौकारयोर्भवेत्। ऐकारौकारयोर्मात्रा" इसके अनुसार 'ए', 'ओ' की अर्धमात्रा कण्ठया अर्थात् अकार है, 'ऐ', 'औ' की एकमात्रा कण्ठया (अकार) है। इस प्रकार 'ए', 'ओ' की सार्धमात्रा कमशः 'इकार' तथा 'उकार' है। 'ऐ', 'औ' की एक मात्रा 'इकार' तथा 'उकार' है (40)।

शिक्षा पंजिका– पाणिनीय शिक्षा की शिक्षा पंजिका नामक व्याख्या में "अर्धमात्रा तु कण्ठया स्यात् एकारै कारयोर्भवेत्" पाठ प्राप्त होता है। पंजिकाकार ने 'ऐ' तथा 'औ' का स्पश्ट उल्लेख नहीं किया है। इस प्रकार पाणिनीय शिक्षा के मूल पाट तथा शिक्षा प्रकाशकार के पाठ में अन्तर विद्यमान है। 'ऋ' तथा 'ऌ' के अच् भाग का काल पाणिनीय शिक्षा में निर्धारित नहीं किया गया है।

आपिशलि शिक्षा– आपिशलि शिक्षा में सन्ध्यक्षरों ए, ओ, ऐ तथा औ के दो घटक स्वीकार किए हैं– 'द्विवर्णानि सन्ध्यक्षराणि'। (41)। ऋवर्ण में रेफ स्वीकार किया है– "सरेफः ऋवर्णः। (42)" इन वर्णो के काल अर्थात् मात्रा का परिमाण नहीं बताया गया है।

याज्ञवल्क्य शिक्षा– याज्ञवल्क्य शिक्षा में 'ए' तथा 'ओ' वर्णों में एक मात्रा कण्ठया अर्थात् 'अकार' है तथा शेश एक मात्रा तालव्य व ओश्ज्य है। 'ऐ' तथा 'औ' के काल पर विचार नहीं किया गया है।

"आद्यामात्रा तु कण्ठयस्य एकारौकारयोर्भवेत्। तालव्यस्य तथौश्ठयस्य द्वितीया च यथाक्रमात्। (43)"।

काल निर्णय शिक्षा– काल निर्णय शिक्षा में सन्ध्यक्षरों में 'ऐ' तथा 'औ' का एक मात्रा अकार' है, शेश एक मात्रा कमशः इकार' (ऐ में) तथा उकार (औ में) है। 'ए' तथा 'ओ' में अर्धमात्रा 'अकार' है शेश अध्यर्धमात्रा कमशः 'इकार' (ए में) तथा 'उकार' (ओ में) है।

ऋ तथा ऌ में क्रमशः रेफ तथा लकार की अर्धमात्रा है, शेश अर्धमात्रा अज्भाग है। व्यंजन और स्वरभक्ति का काल अर्धमात्रिक है।

"व्यंजनस्वर भक्तीनां कालः स्यादर्धमात्रिकः। ऐकारौकारयोरादावकारोप्यर्धमात्रकः।।
इवर्णो वर्णयोः शेशौ स्यातामध्यर्धमात्रिकौ। एकारौकारयोरादावकारो प्येक मात्रकः।।
इवर्णोवर्णयोः शेशौ भवेतामथ मात्रिकौ। (44)।

कोहलीया शिक्षा– कोहलीया शिक्षा में ऋकार के विशय में इस प्रकार कहा गया है कि–

"ऋकारे आदिरणुमात्रो मध्ये रेफो णुमात्रिकः। अणु मात्रस्तथान्त्यांशों मध्ये भक्तिर्विधीयते। (45)।।

अर्थात् ऋकार में आदि अंश अणु मात्र है, तत्पश्चात् रेफांश अणुमात्र है, तत्पश्चात् अज्भाग अणुमात्र है, तत्पश्चात् अन्त्यांश अणुमात्रिक हैं। अणु से तात्पर्य मात्रा का चतुर्थांश है। इस शिक्षा में सन्ध्यक्षरों के विशय में कुछ नहीं कहा गया है।

इ–विरामकाल– वेदाध्ययन में विराम की स्थिति पर भी सम्यक विचार किया गया है। कहाँ और कितना विराम होना चाहिए इस विषय का ज्ञान होना भी वेदफल की प्राप्ति के लिए आवश्यक है। शिक्षा ग्रन्थों में इस विषय पर विचार किया गया है–

याज्ञवल्क्य शिक्षा– इसमें कहा गया है कि अवग्रह में अर्द्धमात्रा कालिक विराम होना चाहिए। पदपाठ में पदद्वय के मध्य में एक मात्रिक विराम होना चाहिए। ऋचा के अर्द्धभाग के पश्चात् द्विमात्रिक विराम होना चाहिए। सम्पूर्ण ऋचा के अन्त में त्रिमात्रिक विराम होना चाहिए। (46)

व्यास शिक्षा– इसमें कहा गया है विसर्ग के अन्त में तथा क्ष परे होने पर अर्द्धमात्रिक विराम होना चाहिए– आवः क्षेमे, मनः क्षेमे। पर्ववती संयोग की स्थिति में पूर्व में अर्द्धमात्रिक विराम होता है– तद्रुद्रस्य। ओष्ठ्यवर्णद्वव के मध्य में अर्द्धमात्रिक विराम होता है– तनुवौ, आबभूवुः।

अवसान निर्णय शिक्षा– इस ग्रन्थ में यजुः स्वरूप (गद्यात्मक) मन्त्रों में कहाँ कहाँ और कितने विराम होते हैं इस विषय पर विचार किया गया है।

मनःस्वार शिक्षा– इसमें यजुर्वेद संहिता में यजुः मन्त्रों में विरामों के स्थल व संख्या का परिगणन किया गया

है। कालगत अथवा स्थानगत भेदों से संहिताओं में जो अंतर परिलक्षित हुए तदनुसार उनके विश्लेषण शिक्षाग्रंथों में निहित हुए। शाखा विशेष से संबंधित व्याकरण तत्संबंधी शिक्षाग्रन्थों में उल्लिखित हैं जिससे स्पष्ट है कि पूर्वकालिक आचार्यों ने शिक्षाग्रन्थों के रूप में भाषा विज्ञान की आधारशिला स्थापित की थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. याज्ञवल्क्य शिक्षा (12)
2. वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा (23–23)
3. शम्भू षिक्षा, माण्डूकी शिक्षा (पाणिनि शिक्षायाः शिक्षान्तरैः सह समीक्षा–डा० मधुकर पाठक) (पृ० 122–123)
4. शम्भू षिक्षा, माण्डूकी शिक्षा (पा शि शि स स) (पृ० 122–123)
5. पा० शि० शि० स० स०–पृ 111।
6. पाणिनीय शिक्षा– ।11।
7. पा० शि०– ।49.
8. पा० शि०– ।28।
9. याज्ञवल्क्य शिक्षा ।16।
10. या० शि० ।46।
11. या० शि० ।47।
12. या० शि० ।48।
13. या० शि० ।49।
14. या० शि० ।73।
15. या० शि० ।74।
16. या० शि० ।76।
17. या० शि० ।78।
18. वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा ।22।
19. वर्ण रत्न प्रदीपिका शिक्षा ।190।
20. मल्लशर्म.ताशिक्षा ।45।
21. म० श० शि० ।43–44।
22. म० श० शि० ।45–46।
23. लोमशीशिक्षा । अष्टम खण्ड। 7.8.9।
24. माण्डूकी शिक्षा (पा० शि० शि० स० स० । पृ 114)
25. तत्रैव
26. नारदीय शिक्षा । द्वितीय प्रपाठक । द्वितीय काण्डिका –8।
27. नारदीय शिक्षा । द्वितीय प्रपाठक । तृतीय काण्डिका –8।
28. शैशिरीय शिक्षा– पा० शि० शि० स० स० – पृ 114–115।
29. कौहलीय शिक्षा– पा० शि० शि० स० स० – पृ 115।
30. कौहलीय शिक्षा– पारि शिक्षा, शम्भू शिक्षा पा० शि० शि० स० स० – पृ 115।
31. कौहलीय शिक्षा– पारि शिक्षा, शम्भू शिक्षा पा० शि० शि० स० स० – पृ 115।
32. कौहलीय शिक्षा– पारि शिक्षा, शम्भू शिक्षा पा० शि० शि० स० स० – पृ 115।
33. आरण्य शिक्षा– पा० शि० शि० स० स०–(पृ 116)
34. व्यास शिक्षा– 26.444
35. व्या० शि०– 441,442
36. व्या० शि०– 473,474
37. व्या० शि०– 445
38. व्या० शि०– 447,448
39. पा० शि०– ।19।

40. पा० शि० प्र० 18.19.20.21
41. आपिशलि शिक्षा– 1.20
42. आपिशलि शिक्षा– 1.21
43. या० शि०– उत्तरार्द्ध '21।
44. काल निर्णय शिक्षा पा० शि० शि० स० स० – पृ 119
45. कौह० शि० पा० शि० शि० स० स० – पृ 120
46. या० शिक्षा– 13–14

*****